

नवीन वर्षोपायन ।

प्रेमघनोपनामक

उपाध्याय श्री बदरी नारायण शर्म्मा चौधरी

समर्पित ।

A HAPPY NEW YEAR'S PRESENT

FROM

UPADHYAYA BADRI NARAYAN CHOWDHRY (PREMGHAN).

विक्रमीय सम्वत् १८५७

मिरजापुर ।

आनन्द कादम्बिनी यन्त्रालय में मुद्रित हुआ ।

निवेदन।

प्रिय सुहृद्!

इस नवीन वर्ष के नवीनोपनाम युक्त कवि द्वारा समर्पित इस नवीनोपायन को अंगीकार कर नवीन कृपा वितरण कीजिये। और नवीन शृंगार सुसज्जित प्रकृति देवी की नवीन शोभावलोकन से न केवल नवीन आनन्द अनुभव कर तृप्त हूजिये, वरञ्च इस नवीन वर्षारम्भ के शुभ अवसर पर नवीन भक्ति युक्त उसी महामाया प्रकृति देवी की वन्दना कर नवीनागत आधि व्याधि आदि के उपशमनार्थ प्रार्थना कीजिये कि जिससे समस्त भारतवासी आजकल कातर हो रहे हैं। उस जगज्जननी की सामान्य कृपा से सर्वथा सहजहीं सुलभ है कि जिस प्रकार संसार दुखदायी शिशिर के अधिकार से विमुक्त ऋतुराज के राज से सुशोभित हो रहा है, हमारा प्यारा भारतोद्यान भी सम्बत् १९५६ रूपी शिशिर के अन्त के साथही दुष्काल महामारी आदि पुराण पत्रादि त्यागकर सुखसमृद्धयादि नवीन पुष्प फल पल्लव से हरा भरा लह॰ लहा होकर हर्ष का हेतु हो॥ और वह दयामयी देवी ऐसाही करे। ऐसाही करे!!

श्री मंगलमूर्त्तयेनमः।

प्रार्थना।

आदि सक्ति जननी सकल दुःख सिसिर करि अन्त।
भेजी भारत बाग पर सुख को सुभग बसन्त॥

राग भैरव।

जय जय जय जगत जननि चण्ड मुण्ड महिष हननि,
आदि ज्योति जागति जय देवि विन्ध्यवासिनी॥ टे०॥

पालन सिरजन सँहार, करत तुही बार बार;
अखिल लोक स्वामिनि घट घट प्रभा प्रभासिनी॥

जयति महामाया, जय जयति ईस जाया;
जय काली श्री सारदा अनेक रूप रासिनी॥

सेवत सुर सकल चरन, जुगल जासु जलज बरन;
सरद चन्द निन्दत वर बदन छबि सुहासिनी॥

चारौ फल देन हारि, नेक दया दृग निहारि;
पाहि! प्रेमघन कृपालि! भक्तन भय नासिनी॥

चैतो अष्टपदी ।

विन्ध्याचल कैसो सुखमा सरसाई हो रामा ।
आय आज रितुराज साज सजि हो जावैं रह्यो छाई हो रा० ॥

लिये ललित पल्लव लतिका तरु तैं लपटाई हो रामा ।
युव युवतीन रहीं सनेह सिखलाई हो रामा ॥

फबि फूले फूलन बन हो सुगन्ध अधिकाई हो रामा ।
भूला भौंरा रे भरमै हरखाई हो रामा ॥

फलि फल संकुल मधुर बिटपवर हो उनए गरुवाई हो रामा ।
बिहँगावलि गावैं रवि राग बधाई हो रामा ॥

सीतल सरस सुगन्ध मन्द गति सों समीर सुभ आई हो–
सुखद संयोगिन बनो बिरहिन दुखदाई हो रामा ॥

चारु चमक चौगुनी चन्द लखि हो चकोर ललचाई हो–
चहँकन लागे हो कल बोल सुनाई हो रामा ॥

प्रगट महामाया देवी की हो लखिये सुघराई हो रामा ।
साजि सिंगार नयो मन लेत लुभाई हो रामा ॥

नवल रंग लहि प्रेम प्रेमघन हो घन सो घुमड़ाई हो रामा ।
जनमनभूमि रह्यो रस काम मिजाई हो रामा ॥

शुभमस्तु ।

"सेवक सदन स्वामि आगमन। मंगल मूल अमंगल दमन।"

आर्य्याभिनन्दन।

अर्थात्

श्रीमान् विविधविरुदावली विराजमान महामान्य युवराज जार्ज फ्रेडरिक अर्नेस्ट आलबर्ट प्रिन्स आफ़ वेल्स वीरेश के भारत शुभागमन पर एक स्वागत सम्बन्धी काव्य।

———:o:———

वर्तमान श्रीमान् भारत राजराजेश्वर के युवराजावस्था में भारत आगमन के अवसर पर "युवराजाशिष।" स्वर्गीया महाराणी के भारत राजराजेश्वरी पद ग्रहण महोत्सव पर "भारत भाग्योदय।" राजराजेश्वरी की प्रथम जुबिली पर एक "चित्र काव्य।" हीरक जुबिली के अवसर पर "हार्दिक हर्षादर्श।" वर्तमान सम्राट के राज्याभिषेक पर "भारत बधाई।" प्रणेता और समर्पणकर्ता. अनेक अन्य गद्य पद्य नाटकादि के कवि और रचयिता, "नागरी नीरद" नामक साप्ताहिक समाचार पत्र और "आनन्द कादम्बिनी" नाम्नी मासिक पत्रिका के सम्पादक

उपाध्याय श्री बदरी नारायण शर्म्मा प्रेमघन

प्रणीत और उक्त श्रीमान् की सेवा में

सादर समर्पित।

"व' आयें घर प' हमारे खुदा की कुदरत है।
कभी हम उनको, कभी अपने घर को देखते हैं।"

मीरजापुर

आनन्द कादम्बिनी यन्त्रालय में मुद्रित हुआ।

सन् १९०६ ई०।

A TRIBUTE.

OUR GRACIOUS & REVERED PRINCE,

Your Highness' arrival in India has brought forth this small poem as an expression of the joyous ecstasy to which Indian Aryans, forgetting their present troubles, have been raised. It is laid at the feet of Your Royal Highness as a tribute of love, and an evidence of loyal welcome. A kind perusal of it by Your Highness will amply repay

THE AUTHOR.

DBA000010136HIN

समर्पण ।

महामान्य युवराज !

श्रीमान् के भारत में विराजमान होने से वर्तमान सभी दुख भूली भारतीय आर्य्य प्रजा के आनन्दोन्मादालाप रूप यह प्रेमोपहार वा स्वागत सत्कारमय क्षुद्र काव्य आप के पूज्य चरणों में समर्पित है, दृष्टिदान से सम्मान प्रदान कर कृतज्ञार्थ कीजिये ।

श्रीमान् का एक अकिञ्चन शुभचिन्तक
प्रजा, प्रणेता वा समर्पक ।

आर्य्याभिनन्दन।

—————:०e०:—————

दोहा।

स्वागत! स्वागत! आप हित, भावी भारत भूप।
बड़े भाग सों पाइयत ऐसे अतिथि अनूप॥
पलक पाँवड़े आप हित जौपै देहिं बिछाय।
लोचन जल पद जुगल तुव धोवैं हिय हरखाय॥
सब कुछ वारैं आप के ऊपर तोहूँ थोर।
लखि तुव गुरुजन राज कृत गुरु उपकारनि ओर॥
जिहि प्रभाय भारत सक्यो बहुतेरे दुख खोय॥
उन्नति हू बहु करि सक्यो सावधान अति होय॥
तऊ अजहुं याको दसा अधिक दया के जोग।
जासु आस तुव तात सों हैं राखत हम लोग॥
धन्य भाग तिहि लखन हित तुम इत आये आज।
प्यारी युवरानी सहित हे प्यारे युवराज॥

———

यदपि न भारत वह रह्यो जिहि गावत इतिहास।
जाहि लखन हित नित जगत जन मन रहत हुलास॥
अंग, वंग, कुरु, मध्य, पञ्चाल, मगध, कसमीर।
सूरसेन, मिथिला, दसा लखि मन होत अधीर॥
पूरब की कासी न वह, यह जो तुमैं दिखाति।
अलका अरु कैलास तैं सरस कही जो जाति॥

स्वर्णमयी नगरी सुभग ताको सूचक नेक।
यहै कनक मन्दिर यहै विश्वनाथ को एक ॥
नष्ट भयो कै वार को थप्यो अनेकन ठौर।
दुखद अंश अवशिष्ट तिन के निरखहु करि गौर ॥

माधव मन्दिर और माधव धवरहरा देखि।
सकहिं आप सहजहिं समझि उभय दसा सुबिसेखि ॥
पिछली कासी पास मझली कासी की रेख।
सारनाथ सिस्सार मैं खँडहर रूप धसेख ॥

नहिं अड़तालिस कोस अब अवधपुरी विस्तार।
रामायन ही मैं मिलत वाकी छटा अपार ॥
राजधानि जो जगत की रही कबहुँ सुख साज।
सौ पचास बिगहान मैं सो सिकुरी सो आज ॥

प्रतिष्ठानपुर मध्य अब माटी ही को ढेर।
इक ईंटहु वा नगर की लहि न सकत कोउ हेर ॥

श्री मथुरा, द्वारावती, इन्द्रप्रस्थ वह रूप।
पढ़ि भारत लखि सकत, नहिं भारत छिति पर भूप!
नहिं पाटली, न हस्तिना, नहिं अवन्तिका सोय।
जासु कथान पुरान सुनि अतिसय अचरज होय ॥
टूटीं, फुटीं, लुटी गईं, लटीं अनेकन वार।
उन नगरिन लखि हरखि को सकि है कौन प्रकार?

कहँ केशव, गोविन्द, कहँ सोमनाथ को धाम?
महाकाल शिवसदन कहँ, ज्वालायतन ललाम?
थानेसर, परभास, पुष्कर अरु गया विलोकि।

सहृदय को अस जो भला सकै सोक हिय रोकि ?
सहत-महत, धारापुरी, नासिक नष्ट निहारि।
पाटन, कन्ती नगर लखि सकै धीर को धारि ?
दुर्ग मानधाता तथा रोहितास्व अब देखि।
कालिञ्जर, चित्तौर त्यों दसा देवगढ़ पेखि,—
पाय सकत आनन्द को निरखि दसा अति हीन ?
विविध नगर कन्नौज से हाय आज छवि छीन !
साठ सहस नर जहँ रहे नित प्रति बेंचत पान।
तहं की जन संख्या करे कैसे कोउ अनुमान ?

दिल्ली मैं किल्लौ बँची भग्न पिथौरा धाम !
सकल नगर प्राचीन को बँच्यो पुरानो नाम ॥
खंडहर के, विपरीत निज नाम दृश्य दिखराय।
दर्शक गन मन माहिं उपजावत करुणा भाय ॥
जहँ देवालय दिव्य नित राग रंग सों पूर।
सब सुख साज सजे रहत, हाय उड़ति तहं धूर !
सूनी मसजिद कहुं, बनी कहुं मकबरे लखाहिं।
अरब और ईरान के टुकरे से दरसाहिं ॥

बने अनेक प्रकार जे नगरन भवन नवीन।
उनमें कहूँ न लखि परति भारत छवि प्राचीन ॥
नहिं पूरब से नगर, नहिं जन पद, तीरथ, धाम।
नहिं बन, नहि तप संस्थल वीत राग विश्राम ॥
ऋषि त्रिकाल-दर्शी न कहुं मुनि जन इतै लखाहिं।
आतमज्ञानी, सिद्ध योगी नहिं प्रगट दिखाहिं ॥

धर्म्म कर्म्म रत तपोधन विबुध विप्र न लखात !
दया, दान, रन वीर छत्री नहिं कहूँ सुनात ॥
धन कुवेर वर वैश्य के वृन्द न अब या ठोर।
शिल्पकला कुल कुशल को शूद्र गुनी सिर मौर
सबै वरन सब आस्रम की अब एकै चाल।
सब स्वधर्म्म विपरीत पथ पथिक बने यहि काल !
कहं धर्म्मानुष्ठान? कहं लुटत दान दरसाय ?
कहां यज्ञशाला रुचिर रचना परत लखाय ?
वीरन की हुँकार कहँ, दीनन की आसीस ?
वन्द्य वेद निर्घोष कहं शुचि सुनात अवनीस ?
जहं संगीत समुद्र सुर उमड़्यो रहत हमेस।
जो उछाह, आनन्द, गुन गन, धन पूरित देस ॥
सो सब अगिले गुननसों साँचहुँ सूनो आज।
ताहि निरखि कब मन हरखि सकि हो ? हे युवराज !

सबै विदेसी वस्तु, नर गति, रति, रीति लखात।
भारतीयता कुछ न अब भारत मैं दरसात ॥
मनुज भारती देखि कोउ सकत नहीं पहिचान।
मुसुल्मान, हिन्दू किधौं, कै हैं ये क्रिस्तान !
पढ़ि विद्या परदेस की बुद्धि विदेसी पाय।
चाल चलन परदेस की गई इन्हें अति भाय ॥
ठटे विदेसी ठाट सब, बनयो देस विदेस।
सपनेहूँ जिनमैं न कहुं भारतीयता लेस ॥

यदपि तिहारो राज इत सुभ सिच्छा को द्वार।
खोल्यो देन प्रजान हित विद्या विविध प्रकार॥
पेट काज पर ये सिखे बस अंगरेजी एक।
अंगरेजी मति गति लई तजि संस्कृत विवेक॥
बोलि सकत हिन्दी नहीं अब मिलि हिन्दू लोग।
अंगरेजी भाखत, करत अंगरेजी उपभोग॥
अंगरेजी वाहन, वसन, वेष, रीति औ नीति।
अंगरेजी रुचि, ग्टह, सकल वस्तु देस विपरीति॥
हिन्दुस्तानी नाम सुनि अब ये सकुचि लजात।
भारतीय सब वस्तु ही सों ये हाय घिनात!
देस नगर बानक बनो सब अंगरेजी चाल।
हाटन मैं देखहु भरो बस अंगरेजी माल॥
तासों भारत मैं कहा भारतीयता सेस।
जो इत, सो सब आप नित हैं देखत निज देस॥
पै अंगरेजी राज संग सब अंगरेजो साज।
छबि देखि तुव हरख को हेतु एक युवराज॥

परम कठिनता इक परी है याहू के माहिं।
अंगरेजी गुन गन्ध नहिं प्रविसो इन हिय माहिं॥
ऊपर सों भारत सकल पलटि रूप प्राचीन।
मनहुँ विलाइत को बनो बच्चा एक नवीन॥
पै नहिं वाकी प्रजा सम इन्हैं मिल्यो अधिकार।
तासों विविध प्रकार को इनमैं बढ़ो विकार॥
पितामही तुव दै चुकी वचन देन हित तासु।

दुर्भागनि पायो न इन अब लौं लायें आसु ॥
पैहैं पिता प्रसाद तुव जब वह ये युवराज !
सजिहै भारत पर तबहिं यह अंगरेजी साज ॥
जो आये भारत लखन तुम करि इतो प्रयास ।
तो विशेष फल को नहीं सम्भव पूरनि आस ॥
अरु सांची निज प्रजन की दसा देखिबे काज ।
जो आये सहि कष्ट तुम इतो इते युवराज ?
तो निरखहु निज नैन सों अन्तर दगा सुजान !
नहिं ऊपैर की चमक लखि भूलो कै मुनि कान ॥
यों छत कारिज होइगो निश्चय ई युवराज !
सहजहिं समुझि सुधारि हौ भारत को शुभ साज ॥
कीरति निज, निज वंश, निज राज थापिहौ आप ।
भारत भूमी पर अटल उज्ज्वल ब्रिटिश प्रताप ॥

यदपि चाल सब भारती पलटि भये छवि छीन ।
तौ हूं इन मैं बचि रह्यो इक गुन अति प्राचीन ॥
राजभक्ति इन मैं रही जैसी अकथ अनूप ।
वैसोही तुम आजहूं पैहौ पूरब रूप ॥
भारत पति सुत, पत्नि सँग भारत निरखन काज ।
आयो सुनि भारत प्रजा को हिय हरखित आज ॥
करत सक्ति अनुरूप जो उत्सव विविध प्रकार ।
सो नहिं तुमरे जोग यह निश्चय राजकुमार !
बाहर इनको दसा दरसात मनोहर पीन ।
पर जो भीतर देखिये सबही विधि सों हीन ॥

रोग सोग दुष्काल सों आरत भारत आज।
सकत कहा सत्कार करि ये तुमरो युवराज !
पर भीतर इनको हृदय जो निरखहु धरि ध्यान।
अमल प्रेम उत्साह परि पूरित बिन परिमान ॥
सबै गुनन के पुञ्ज नर भरे सकल जग माहिं।
राजभक्त भारत सरिस और ठौर कहुँ नाहिं ॥

लहि तिन दीन प्रजान को अमल प्रेम उपहार।
यदपि तुच्छ तो हूँ अधिक गुनिये हरखि कुमार ॥
अरु अलभ्य अनमोल गुनि लेहु प्रजा आसीस।
युवरानी संग सुख सहित जियहु असंख्य बरीस ॥

राज दुलारी ! लाडिली युवरानी ! गुन खानि !
अचल सुहाग रहै सदा तेरो जग सुख दानि !!
जुग जुग जीवहु यह जुगल जोरी लहि आनन्द।
पुत्र पतोह्न पौत्र संग हीन सकल दुख दन्द ॥
तेरे अरि हेरे न कहुँ मिलैं जगत के माहिं।
राज तिहारे बीच दुख प्रजा अनीति हेराहिं ॥
बिना विघ्न भारत भ्रमन करि पहुँचहु निज देस।
भारतेश सों कहहु यह भारत को सन्देस ॥
मांग्यो बारम्बार जो वह शुभ अवसर जानि।
मांगत सोई आप सों फिरि जोरि जुग पानि,—

रोला।

"चहत न हम कछु और, दया चाहत इतनो बस।
छूटैं दुःख हमरे, बाढ़ै जासों तुमरो जस ॥"

भारत को धन, अन्न और उद्यम व्यापारहिं।
रच्छहु, वृद्धि करहु सांचे उन्नति आधारहिं॥
दरन भेद, मतभेद, न्याय को भेद मिटावहु।
पच्छपात, अन्याय बचे जो तिनहिं निवारहु॥
पूरन मानव आयु लहो तुम भारत भागनि।
पूरन भारतीन की करत सकल सुख साधनि॥"

बरवै।

या हित तुम कहं पुनि यह देहिं असीस।
वारे कुँवर! तोहि सांचो श्री जगदीस॥

सवैया।

प्रजा सुखी तेरी रहै लहि वृद्धि, समृद्धि बढ़ै संग राज दराज।
सुकीरति छाय रहै छिति छोर, परै तुव वैरिन कै सिर गाज।
प्रताप अखण्ड रहै 'घन प्रेम' सुनीति परायन मन्त्रि समाज।
संवारत भारत को सुभ साज जियो सदा भारत के युवराज।

हरिगीती।

सब दीपको विद्या, कला, विज्ञान इत चलि आवई।
उद्यम निरत आरज प्रजा रहि सुख समृधि बढ़ावई॥
दुष्काल, रोग, अनीति नसि, सद्धर्म उन्नति पावई।
भट, विबुध, भक्त, सुरत्न भारत भूमि नित उपजावई॥

तथास्तु।